तृतीय अध्याय : प्रेमचंद के उपन्यासों में चित्रित विविध समस्याएँ।

१] वेश्या समस्या।

२] विवाह समस्या।

३] पारिवारिक समस्या।

४] शैक्षिक समस्या।

५] अछूत समस्या।

६] रियासतों की समस्या।

७] साम्प्रदायिक समस्या।

८] औद्योगिक समस्या।

९] स्वाधीनता पाने की समस्या।

१०] किसान समस्या।

तृतीय अध्याय : प्रेमचंद के उपन्यासों में चित्रित विविध समस्याएँ।

१] वेश्या समस्या।

प्रेमचंद के आरंभिक अपन्यास से लेकर अंतिम उपन्यास तक यह भली-भांति दृष्टिगोचर होता है कि वे एक समस्यामूलक अपन्यासकार थे। किसी भी समाज के लिए यह लज्जा की बात है कि वह अपने एक महत्वपूर्ण अंग नारी-जाति, को घृणित पेशा करने के लिए विवश करे। प्रेमचंद अपना प्रसिध्द और लोकप्रिय उपन्यास ` सेवासदन ` में वेश्या समस्या को लेकर हमारे सामने आते हैं। इस एक मात्र उपन्यास में वेश्या-वृत्ति का उन्होंने विस्तार से वर्णन किया है। वेश्या समस्या के मूल कारणों से लेकर इस सामाजिक प्रथा को दूर करने के उपायों तक का वर्णन ` सेवासदन ` में मिलता है।

वे कौनसे कारण हैं, जो नारियों को इस व्यवसाय के लिए विवश करते हैं ? नारियाँ क्यों पतित-जीवन व्यतीत करती हैं ? प्रेमचंद ने नारियों के पतन के इन कारणों का उल्लेख किया है- सामाजिक कुरीतियाँ, विधवा की बुरी सामाजिक स्थिति, नारी को उचित सम्मान न मिलना, शिक्षा का अभाव, धन का लोभ, रूप का अभिमान, पति द्वारा उपेक्षा इत्यादी।

` सेवासदन ` में प्रेमचंद का दृष्टिकोण आदर्शवादी है। इसमें वे सुधारवाद के चश्में से सामाजिक विकृतियोंका मूल्यांकन करते हैं, पर आगे चलकर उनके विचार पर्याप्त क्रांतिकारी हो जाते हैं और वे समाज का मूल ढांचा ही बदलने का आवाहन करते हैं। प्रेमचंद ने ` सेवासदन ` उपन्यास की सुमन के रूपमें एक ऐसी हिंदू-नारी का चित्रण किया है, जो बहुतांश में तो समाज के कारण, किंतु कुछ हद तक अपनी मनोवृत्ति के फलस्वरूप भी, पतन का मार्ग अपनाती है। वह वैवाहिक कुरीतियों, अनाचार पूर्ण सामाजिक नियमों, अन्यायपूर्ण धार्मिक व्यवस्था और बुरी आर्थिक स्थिति तथा भोग

लालसा के कारण पतन का शिकार होती है। प्रेमचंद वेश्या समस्या की जड में निहित नारी मनोविज्ञान की बारीकियों में भी नहीं उलझे। न उनका दृष्टिकोण विशुध्द सामाजिक है। वे बताते हैं कि आर्थिक-सामाजिक कारण मिलकर मनुष्य के मन को बनाते हैं। अत: उन्होंने किसी व्यक्ति विशेष को न लेकर विशिष्ट वर्ग को ही अपने सामने रखा। इसलिए ` सेवासदन ` की सुमन से पाठकों के मन में नफरत न होकर सहानुभूति निर्माण होती है।

"सुमन सुंदर है, सुशील है, गुणवती है, किंतु बुरी दहेज प्रथा के कारण वह एक अयोग्य पुरुष से ब्याही जाती है। उसका पति कुरूप, दुहाजू और निर्धन है। गंगाजली [सुमन की माता] दामाद को देखकर बहुत रोई। उसे ऐसा दु:ख हुआ, मानो किसी ने सुमन को कुएँ में डाल दिया।" [१]

सुमन को उसका पति घरसे निकाल देता है, तब वह भोली वेश्या के पास पहुँचती है। भोली वेश्या सुमन के दाम्पत्य जीवन को इसी असमानता की ओर लक्ष्य कर कहती है- "मैं जानती थी कभी-न -कभी तुमसे खटकेगी जरुर। एक गाडी में कहीं अरबी घोडी और लद्दू टट्टू जुत सकतें हैं ? तुम्हें तो किसी बडे घर की रानी बनना चाहिए था। मगर पाले पडी एक खुसट के, जो तुम्हारा पैर धोने लायक भी नहीं।" [२]

स्त्रियाँ वेश्या वृत्ति क्यों अपनाती है ? प्रेमचंद ने इस विषयपर निम्नलिखित तथ्यों का उल्लेख किया है-

वकील पद्मसिंह शर्मा सुमन के वेश्या वृत्ति अंगीकार करने पर अपने मन में सोचते है- "यदि मैंने उसे घर से निकाल न दिया होता तो इस भाँति उसका पतन न होता मेरे यहाँ से निकलकर उसे और कोई ठिकाना न रहा और क्रोध और कुछ नैराश्य की अवस्था में वह यह भीषण अभिनय करने पर बाध्य हुई।" [३]

बैंक के बाबू और समाज-सुधारक विठ्ठलदास से स्वयं सुमन वेश्या वृत्ति अपनाने के मूल कारण पर चर्चा करती है- "आप सोचते होंगे कि भोग विलास की लालसा से कुमार्ग में आयी हूँ, पर वास्तव में ऐसा नहीं है। मैं जानती हूँ कि मैंने अत्यंत निकृष्ट कर्म किया है। लेकिन मैं विवश थी, इसके सिवा मेरे लिए और कोई रास्ता न था।" [४]

प्रेमचंद ने सुमन के वेश्या बनने का और एक कारण बताया है, वह यह कि सुमन की धन की लालसा। सुमन पति से छिपा कर कुछ खानें-पिने की चीजें खरीद लेती है और महीने के अंत में गृहस्थी के खर्च के लिए भी पैसे नहीं बचते। वह पडोसी स्त्रियों को गहने-कपडे बनवाते देखती है, तो सोचती है- "यह सब नये-नये गहने बनवाती है, नये-नये कपडे लेती है और यहाँ रोटियों के लाले हैं। क्या संसार में मैं ही सबसे अभागिनी हूँ?" [५]

वेश्या जीवन अपनाने के बाद सुमन को अपनी भूल मालूम होती है और वह बार-बार अपनी भोग-लालसा को ही अपनी कुप्रवृत्ति के लिए दोषी ठहराती है। वह सोचती है, "हाय। मुझ-जैसी अभागिन संसार में न होगी, मैंने विलास-तृष्णा की धुन में अपने कुल का सर्वनाश किया। अगर विलास की इच्छा और निर्दय अपमान ने उसकी लज्जाशक्ति को शिथिल न कर दिया होता, तो वह घर से बाहर कदापि पाँव न निकालती।" [६]

इसके अलावा अपने वेश्या वृत्ति का कारण सुमन अनमेल विवाह को मानती है। समाज सुधारक विठ्ठलदास से स्वयं सुमन वेश्या वृत्ति अपनाने का मूल कारण बताती है, "मैं एक ऊँचे कूल की लडकी हूँ। फिर भी मुझ से अपना अपमान न सहा जाता था। जिसका निरादर होना चाहिए, उसका आदर होते देखकर मेरे हृदय में कुवासनायें उठने लगी थी।" [७]

सुमन के पतन का कारण उसका सौंदर्याभिमान और चंचलता भी है। वह यह भी मानती है कि ... विलास-वासना के कारण अपनी यह दुर्गति हो गयी। केवल इंद्रियों के सुख-भोग ने अपनी आत्मा का सर्वनाश किया। सुंदरता को कोसते हुए सुमन कहती है- "हे प्रभो। तुम सुंदरता देकर मन को चंचल क्यों बनाते हो? मैंने सुंदर स्त्रियों को प्रायः चंचल ही ... पाया। कदाचित ईश्वर युक्ति से हमारी आत्मा की ... परीक्षा करते हैं, अथवा जीवन मार्ग में सुंदरता रूपी बाधा डालकर हमारी आत्मा को बलवान, पुष्ट बनाना चाहते हैं।" [८]

इतना ही नहीं तो सुमन अपने रूप और यौवन की प्रशंसा सुनने के लिए व्याकुल रहती है- "उस मुहल्ले में रसिक युवकों तथा शोहदों की भी कमी न थी। स्कूल से जाते हुए युवक सुमन के व्दार की ओर टकटकी लगाए हुए चले जाते। शोहदे उधर से निकलते, तो राधा और कान्हा के गीत गाने लगते। सुमन कोई काम करती हो, पर उन्हें चिक की आड से एक झलक दिखा देती। उसके चंचल हृदय को इस ताँक-झाँक में असीम आनंद प्राप्त होता था। किसी कुवासना से नहीं, केवल यौवन की छटा दिखाने के लिए, केवल दूसरों के हृदय पर विजय पाने के लिए, वह यह खेल खेलती थी।" [९]

पंडित पद्‍म सिंह [वकील] के यहाँ जब भोली बाई का गाना हो रहा था, मजलिस पर भोली बाई का प्रभाव देखकर सुमन सोचती है- "इस स्त्री का कौन-सा जादू है। सौंदर्य? हाँ, हाँ वह रूपवती है, इस में संदेह नहीं। मगर, मैं भी तो बुरी नहीं। वह साँवली है, मैं गोरी हूँ। वह मोटी है, मैं दुबली हूँ। ... पंडितजी के कमरे में एक बडा शीशा था। सुमन उस शीशे के सामने जा कर खडी हो गई और उसमें अपना नख शिख तक देखा। भोली बाई के अपने हृदयांकित चित्र से उसने अपने एक-एक अंग की तुलना की।" [१०]

BARR. BALASAHEB KHARDEKAR LIBRARY
SHIVAJI UNIVERSITY, KOLHAPUR.

नारी का विलासी-जीवन के प्रति होनेवाला आकर्षण अपने पति के साथ अनबन पैदा करता है और नारी स्वच्छंद जीवन के प्रति उन्मुख होने लगती है। प्रेमचंद ने इसी नारी मनोविज्ञान का परिचय देते हुए सुमन पर होने वाले संस्कारों को भी दिखाया है- "जिन महिलाओं के साथ सुमन उठती बैठती थी व अपने पतियों को इंद्रिय सुख का यंत्र समझती थी। पति, चाहे जैसा हो, अपनी स्त्री को सुंदर आभूषणों से उत्तम वस्त्रों से सजावे, उसे स्वादिष्ट पदार्थ खिलावे..... सुमन ने यही शिक्षा प्राप्त की और गजाधर प्रसाद जब कभी उसके किसी काम से नाराज होते उन्हें पुरुष के कर्तव्य पर लंबा उपदेश सुनना पडता था।" [११]

सुमन ने सुन रखा था कि वेश्याएँ अत्यंत दुश्चरित्र और कुलटा होती हैं। वे अपने कौशल से नवयुवकों को अपने मायाजाल में फँसा लिया करती हैं। कोई भलामानुष उनसे बातचीत नहीं करता, केवल शोहदे रात को छिप कर उनके यहाँ जाया करते हैं। भोली ने कई बार सुमन को चिक की आड में खडी देखकर इशारे से बुलाया था, पर सुमन उससे बोलने में अपना अपमान समझती। वह अपने को उससे बहुत श्रेष्ठ समझती थी- "मैं दारद्र सही, दीन सही, पर अपनी मर्यादा पर दृढ हूँ, किसी भलेमानुष के घर में मेरी रोक तो नहीं, कोई मुझे नीच तो नही समझता।" [१२]

उपर्युक्त तथ्यों को देखने के पश्चात हमें यह पता चलता हैं कि सुमन सीधे-सादे स्वभाव की युवती थी। परंतु परिस्थितियाँ शीघ्र ही उसे यह अनुभव करने के लिए बाध्य करती हैं कि समाज में वेश्याओंका आदर होता ब है, बल्कि स्थूल दृष्टि से देखने पर कुलीन स्त्रियों से भी उनका अधिक आदर होता है। सुमन देखती है कि धार्मिक स्थानों में भी तो वेश्याओंका उतना ही आदर सम्मान होता है, जितना शोहदों और धनी-मानी व्यक्तियों का।

रामनवमी के दिन मंदिर जैसे पवित्र स्थान में वेश्या का गाना हो रहा है और वहाँ उसकी जैसी कुलीन और धर्मप्राण महिलाएँ थक्के खाती हैं।

पति की दरिद्रता, कृपणता, प्रेम-हीनता, कठोरता और शुष्कता के कारण सुमन घर में भी उपेक्षित थी उसे आदर नहीं मिलता। जब वह अपनी सहेली सुभद्रा के घर अपने मानसिक कष्टों को भुलाने के लिए जाती है, तो गजाधर उस पर संदेह करता है और एक दिन व्यंग्य एवं लांछन से उसके हृदय पर भी आघात करता है। होली के दिन सुमन सुभद्रा के यहाँ भोली बाई का गाना सुन आधी रात को घर लौटती है। सुमन के इस आचरण से क्षुब्ध हो कर गजाधर उससे इतनी रात तक घर से बाहर रहने का कारण पूछता है, जो उचित ही है, किंतु वह उस पर अविश्वास करता है, लांछन लगाता है, व्यंग्य करता है। इसपर सुमन क्रोधित हो जाती है।

निष्कर्ष

इस प्रकार हम देखते हैं कि वेश्या के प्रति हिंदू-समाज के असहानुभूति पूर्ण और निर्मम दृष्टिकोण का उल्लेख करते हुए प्रेमचंद ने बतलाया है कि सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक व्यवस्था ही मूलत: स्त्री को वेश्या बनने के लिए प्रवृत्त करती है। वेश्याओंका उदधार करने के लिए प्रेमचंद कहते हैं कि वेश्याओंको समाज से दूर स्थानपर, पवित्र वातावरण में रखना चाहिए। उनके शादी की या रोजी रोटी की व्यवस्था करनी चाहिए। लेकिन यह तभी संभव हो सकेगा जब सामाजिक, धार्मिक आर्थिक व्यवस्था में परिवर्तन हो।

२] विवाह समस्या

समाज के सुसंगठन के लिए वैवाहिक समस्याओंका समाधान आवश्यक है। वैवाहिक समस्या भारतीय समाज की ही समस्या नहीं वरन् समग्र मानव समाज से सम्बंधित है। प्रत्येक देश और जाति के लोग अपने-अपने आचार-विचार

से विवाह के सम्बन्ध में सोचते हैं। प्रेमचंद ने अपने प्राय: सभी उपन्यासों में हिंदू समाज की वैवाहिक समस्या को स्पर्श किया है। सामाजिक संगठन में विवाह का महत्वपूर्ण स्थान है। विवाह की असंगतियों के कारण समाज में अनेक कुरीतियों का जन्म होता है। सामाजिक स्वास्थ्य की दृष्टि से स्त्री-पुरुष के वैवाहिक सम्बन्धों में असंगतियाँ नहीं होनी चाहिए।

विवाह की प्रथा उस समय केवल यह थी कि वर-पक्ष अपने सूर-सामन्तों को सशस्त्र ले आता और कन्या को उड़ा ले जाता था। कन्या के साथ कन्या के घर में रुपया-पैसा, अनाज या पशु, जो कुछ उसके हाथ लग जाता था, उसे भी उठा ले जाता था। वह स्त्री को अपने घर ले जाकर, उसके पैरों में बेड़ियाँ डालकर, घर के अन्दर बंद कर देता था। उसके आत्मसंमान के भावों को मिटाने के लिए उपदेश दिया जाता था कि पुरुष ही उसका देवता है, सोहाग स्त्री की सबसे बड़ी विभूति है। आज कई हजार वर्षों के बीतने पर भी पुरुष के उस मनोभाव में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। सभी पुरानी प्रथाएँ कुछ विकृत या संस्कृत रूप से मौजूद हैं।

`वरदान` उपन्यास में प्रेमचंद लिखते हैं- "यह कच्चे धागे का कंगन पवित्र धर्म की हथकड़ी है जो कभी हाथ से न निकलेगी, और मंडप उस प्रेम और कृपा की छाया का स्मारक है जो जीवन-पर्यंत सिर से न उठेगी।" [१३]

इसी उपन्यास की नायिका वृजरानी कहती है- "हृदय का मिलाप सच्चा विवाह है। सिंदूर का टीका, ग्रंथि बन्धन और भाँवर ये सब संसार के ढकोसले हैं।" [१४]

प्रेमचंद विवाह को एक `पवित्र धर्म` मानते हैं। और उसमें प्रेम को महत्व देते हुए, बाहरी रीति-रिवाज का सांसारिक ढकोसले से अधिक मूल्य नहीं समझते। इसलिए `वरदान` उपन्यास में माधवी सोचती है- "प्रेम चित्त की प्रवृत्ति है और ब्याह एक पवित्र धर्म है।" [१५]

`कायाकल्प` में लौंगी कहती है- "चार भाँवरें फिर जाने से ही ब्याह नहीं हो जाता।" [१६] `प्रतिज्ञा` उपन्यास में कमला प्रसाद विवाह का महत्व

हुए कहते हैं- "ढोल-मजीरा बजा, अतिशबाजियाँ छूटीं और दो अबोध बालक, जो विवाह का मर्म तक नहीं समझते, एक-दूसरे के गले जीवन-पर्यंत के लिए मढ़ दिये गए।" [१७]

इस प्रकार प्रेमचंद ने विवाह को एक पवित्र धर्म माना है और प्रेम कौ विवाह का आधार बतलाया है। उनके अनुसार सामाजिक संगठन में विवाह [illegible] अनिवार्य हो जाता है।

प्रेमचंद युग में दहेज-प्रथा अत्यंत व्यापक एवं जटिल हो गई थी। स्वभावत: इस समस्या की ओर समाज-सुधारकों का ध्यान गया। वस्तुत: यही प्रथा बहुत अंशों में वृध्द विवाहों, बहु विवाहों और बेमेल विवाहों का कारण थी। इस प्रथा ने इतना भीषण रूप धारण कर लिया था कि इसके चलते कितने परिवार उजड गए, कितनी सुशीला, गुणवती और रूपवती कन्याएँ वृध्द, रोगी, निर्धन, कुरूप, निरक्षर और दुर्व्यसनी पुरुषों के पल्ले पडी, कितनी कुमारियों ने आत्महत्या करके अपने माता-पिता को चिन्ता से मुक्त किया, कितनी विवाहिताएँ ससुरालवालों का अत्याचार सह कर असमय में ही काल कवलित हुई और कितनी पतित जीवन व्यतीत करने को विवश हुई।

सामाजिक संगठन में विवाह आवश्यक वस्तु है। दाम्पत्य जीवन की महत्ता प्रतिपादित करता हुआ प्रभुसेवक कहता है- "दाम्पत्य मुनष्य के सामाजिक जीवन का मूल है उसका त्याग कर दीजिए, बस हमारे सामाजिक संगठन का शीरजा बिखर जाऐगा और हमारी दशा पशुओं के समान हो जाएगी।" [१८]

विवाह का महान आदर्श आज समाज में लुप्त हो गया है। दाम्पत्य जीवन का सुख आज दुर्लभ वस्तु बन गया है। वैवाहिक असंगतियाँ आज घर-घर में विद्यमान हैं, जिन्होंने स्त्री-पुरुषों के संबंधों को विकृत तो किया ही है, समाज की शांति भी भंग कर रखी है। प्रेमचंद ने 'वरदान' में लडके-लडकियों के वैवाहिक सम्बन्धों पर आलोचना करते हुए लिखा है- "वह [प्रताप] जो अपने विचारों में विरजन को अपना समझता था, कहीं का न रहा और वह

[कमला] जिसने बिरजन को एक पल के लिए भी अपने ध्यान में स्थान न दिया था, उसका सर्वस्व हो गया।" [१९]

प्रेमचंद ने वैवाहिक असंगतियों की ओर अपने उपन्यासों में जगह-जगह हमारा ध्यान आकर्षित किया हैं। ` निर्मला ` में निर्मला का विवाह दोहाजू से होता है। प्रेमचंद ने व्यंग्य से लिखा है- "अब तक ऐसा ही आदमी उसका पिता था, जिसके सामने वह सिर झुकाकर, देह चुराकर निकलती थी, अब उसकी अवस्था का एक आदमी उसका पति था। वह उसे प्रेम की वस्तु नहीं, सम्मान की वस्तु समझती थी उनसे भागती, फिरती, उनको देखते ही उसकी प्रफुल्लता पलायन कर जाती थी।" [२०]

दोहाजू विवाह, अनमेल विवाह, आदि कुरीतियों ने समाज के ढाचे को जर्जर कर दिया है। अब प्रश्न यह उठता है कि इन कुरीतियोंको किन कारणों ने जन्म दिया है ? अनमेल विवाह क्यों होते हैं ? प्रेमचंद ने दो प्रमुख कारणों को बताया है- प्रथम है दहेजप्रथा दूसरा है माता-पिता की ओर से पर्याप्त सावधानी का अभाव।

दहेज लेने वाले व्यक्ति कुशल होते हैं। प्रेमचंद ने ` सेवासदन ` में कुछ इसी प्रकार का चित्र प्रस्तुत किया है- "मैंने लडके को पाला है, सहस्त्रों रुपए उसकी पढाई में खर्च किये हैं। आपकी लडकी को उससे उतना ही लाभ होगा, जितना मेरे लडके को। तो आप ही न्याय कीजिए कि यह सारा भार मैं अकेले कैसे उठा सकता हूँ।" [२१]

हिंदू समाज में वैवाहिक समस्या को सबसे अधिक जटिल दहेज-प्रथा ने बनाया है। अनेक सुंदर, सुशिक्षित और सुसंस्कृत लडकियाँ समुचित दहेज के अभाव में असुंदर, मूर्ख और असंस्कृत लडकों से ब्याह दी जाती हैं। प्रेमचंद ने एक ऐसे ही अनमेल विवाह की करुण कहानी ` निर्मला ` में कही है। दहेज की कुप्रथा के कारण ही निर्मला का ब्याह अधेंड उम्र के व्यक्ति तोताराम से होता है कि जिसका बेटा निर्मला की उम्र का था। उसका सारा जीवन करुण प्रसंगों से परिपूर्ण है। निर्मला देश के करोडों निर्धन परिवारों की कन्याओं का प्रतिनिधित्व करती है।

निर्मला के पिता बाबू उदयभानू लाल जब जीवित थे तब उन्होंने अपनी पुत्री का विवाह बाबू भालचंद्र सिन्हा के जेष्ठ पुत्र भुवनमोहन से तय कर लिया था। बाबू भालचंद्र सिन्हा ने अपने पुत्र के वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित करते समय दहेज सम्बन्धी कोई बात तय नहीं की, बल्कि यह कह दिया, "आपकी खुशी हो आप दे या न दे, मुझे इसकी परवाह नहीं। हाँ, बारात में जो लोग जाए, उनका आदर-सत्कार अच्छी तरह होना चाहिए। जिससे मेरी और आपकी जग हँसाई न हो।" २२

निर्मला का पिता मरने के पश्चात भुवनमोहन निर्मला से विवाह करने से इन्कार करने लगता है क्योंकि निर्मला की माँ के पास देने के लिए रुपये नहीं होंगे- "कहीं ऐसी जगह शादी करवाइये कि खूब रुपये मिलें और न सही, एक लाख का डौल हो, वहाँ अब क्या रखा है। वकील साहब रहे ही नहीं, बुढियाँ के पास अब क्या होगा ?" २३

`प्रतिज्ञा` की सुमित्रा और कमला प्रसाद में सम्पत्ति का ही विचार प्रमुख था। सुमित्रा व्यथित हृदय से पूर्णा से कहती है- "अपने माता-पिता की धन-लिप्सा का प्रायश्चित कर रही हूँ बहन और क्या ? तुम देख लेना बहन, एक दिन यह महल ढह जाएगा। यही अभिशाप मेरे मुँह से बार-बार निकलता है।..... मेरा विवाह तो इस महलसे हुआ है। लाला बदरी प्रसाद की बहू हूँ, इससे बढ कर सुख की कल्पना कौन कर सकता है ? भगवान ने किस लिए मुझे जन्म दिया, समझ में नहीं आता।" २४

पति-पत्नी के स्वभाव भेद का सुंदर चित्रण प्रेमचंद ने `कर्मभूमि` उपन्यास में किया हैं। `कर्मभूमि` की सुखदा की शादी अमर से होती है। सुखदा एक धनी विधवा की एकलौती पुत्री थी। उसने बेटे की साथ बेटी से पूरी की थी लेकिन- "विवाह हुए दो साल हो चुके थे, पर दोनों के विचार अलग, व्यवहार अलग, संसार अलग। जैसे दो भिन्न जलवायु के जन्तु एक पिंजरे

में बंद कर दिये गए हो।" [२५]

अच्छे वैवाहिक सम्बन्धों के लिए माता-पिता पर बहुत बडा उत्तरदायित्व है। इस दृष्टि से 'कायाकल्प' उपन्यास के यशोदानंदन उल्लेखनीय आदर्श अभिभावक कहे जा सकते हैं। पहली बात यह है कि वे विवाह में धन से अधिक चरित्र को महत्व देते हैं- "अगर मुझे धन या जायदाद की परवा होती, तो यहाँ न आता। मेरी दृष्टि में चरित्र का जो मूल्य है, वह और किसी वस्तु का नहीं।" [२६]

दूसरी महत्वपूर्ण बात यह कि वे कन्या और वर का स्वभाव तथा गुण मिला कर विवाह करना चाहते हैं। वे चक्रधर से कहते हैं- "मेरी पुत्री का स्वभाव, विचार, सिध्दान्त सभी आप से मिलते हैं और मुझे पूरा विश्वास है कि आप दोनों एक साथ रह कर सुखी होंगे।" [२७]

निष्कर्ष

इस प्रकार प्रेमचंद ने विवाह-समस्या के सभी अंगोंपर विचार करने के पश्चात इस समस्या के समाधान के लिए समाज के सामने जो रास्ता रखा हैं वह कानून का नहीं हैं। जब तक हमारे नैतिक मूल्यों में परिवर्तन नहीं होता तब तक इसका ठोस और स्थायी हल मिलना असंभव है।

वैवाहिक समस्याओं के समाधान के लिए माता-पिता, वर और कन्या इन सभी को प्रयत्न करना होगा। संक्षेप में प्रेमचंद का यही संदेश हैं।

३] पारिवारिक समस्या

पुरुष और नारी के पारस्पारिक सम्बन्धों में पति-पत्नी-सम्बन्ध सर्वाधिक स्पृहणीय एवं आदर्श माना गया है। आदिकाल से ही स्त्री और

A
11969

पुरुष ने पारस्परिक आकर्षण का अनुभव किया है और प्राय: सभी सभ्य समाजों में, उन्होंने इसे विवाह के रूप में स्थायित्व प्रदान किया है। सुखी और परितृप्त गृहस्थ-जीवन समस्त सुखों का मूल है तथा संतोषपूर्ण गृहस्थी जीवन-यात्रा को आनंदप्रदायक बना देती है। पति उपार्जन करता है और पत्नी गृह-प्रबंध करती है, इस प्रकार दोनों एक दूसरे के सच्चे मित्र एवं पूरक होते हैं।

हमारे प्राचीन धर्म-ग्रंथों में पत्नी को भार्या, गृहलक्ष्मी, गृहिणी, अर्धांगीनी संसारयात्रा की एक मित्र आदि नामों से अभिहित कर पत्नी पद को गौरवपूर्ण माना गया। किंतु विभिन्न धार्मिक, राजनैतिक, सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियों के कारण, गृह और परिवार के बीच प्रस्फुटित होने वाला नारी रूप शनै-शनै लुप्त हो गया। नारी गृह की बंदिनी, पुरुष की आश्रिता, आत्मसम्मान तथा स्वतंत्र व्यक्तित्व से शुन्य एवं पुरुष से हीन समझी जाने लगी।

प्रश्न है, प्रेमचंद युग में गृहस्थ जीवन क्यों निरानन्द हो रहा था ? दाम्पत्य जीवन की समस्याएँ सबसे अधिक क्यों उलझी हुई थीं ? प्रेमचंद विवाह आत्मविकास का साधन मानते हैं। वे स्त्री को सच्चा मित्र और सहायक मानते हैं। ' कायाकल्प ' में यशोदानंदन कहते हैं- " मैं समझता हूँ कि यदि स्त्री और पुरुष के विचार और आदर्श एक से हो, तो पुरुष के कामों में बाधक होने के बदले स्त्री सहायक हो सकती है। " २८

प्रेमचंद ने विवाह के बाद के भी कुछ ऐसे महत्वपूर्ण तथ्यों का उद्घाटन किया है, जो मधुर दाम्पत्य-सम्बन्ध में बाधक सिध्द होते हैं। उनमें से कुछ इस प्रकार है कि पति का पत्नी के प्रति दुर्व्यवहार और पति व्दारा पत्नी की उपेक्षा, उसका महत्व न समझना, उसपर अधिकार जमाना, उससे सहानुभूति न रखना , अपने को उससे श्रेष्ठ समझना, उसकी भावनाओं का आदर न करना आदि।

भोग लालसा के लिए लालायित एक ऐसी ही युवती का वर्णन प्रेमचंद ने ` सेवासदन ` उपन्यास में किया है। इस उपन्यास की नायिका, सुमन ने यद्यपि पाश्चात्य ढंग की स्कूली शिक्षा नहीं पाई है फिर भी घर पर जो शिक्षा मिली है, वह त्रुटिपूर्ण है- "दरोगाजी [सुमन के पिता] इन लडकियों [सुमन और शांता] को प्राणों से अधिक प्यार करते थे। उनके लिए अच्छे-अच्छे कपडे लाते और शहर से नित्य तरह-तरह की चीजे मँगवाया करते। बाजार में कोई लहरदार कपडा देखकर उनका जी नहीं मानता था, लडकियों के लिए अवश्य ले आते थे।................. लडकियोंको पढाने और सीना-पिरोना सिखाने के लिए उन्होंने एक ईसाई लेडी रख ली थी। कभी-कभी स्वयं उनकी परीक्षा लिया करते थे। " [२९]

फलत: जब उसका [सुमन का] पति गजाधर, गृहप्रबंध के लिए उसके हाथ पर एक माह का वेतन रखता है, तो व्यवस्था-कुशल न होने के कारण तथा आवश्यक, अनावश्यक खर्च का ज्ञान न रखने के कारण, महिने में दस दिन बाकी ही रहते हैं, पर सुमन सब रुपये खर्च कर डालती है। गजाधर कहता है- "रुपये तो तुमने सब खर्च कर दिये, अब बताओ कहाँ से आवें ? "

सुमन, "मैंने कुछ उडा तो नहीं दिये।"

गजाधर, "उडाये नहीं, पर यह तो मालूम था कि इसी में महिने भर चलाना है। उसी हिसाब से खर्च करना था। "

सुमन, "उतने रुपयों में बरकत थोडे ही हो जाएगी ?"

गजाधर, "तो मैं डाका तो नहीं मार सकता। " [30]

प्रेमचंद वैवाहिक जीवन के आनंद के लिए उपर्युक्त शिक्षा पर जोर देते हैं, क्योंकि यह मानव-प्रवृत्ति का संस्कार करती है। वह [सुमन] पति से जिव्हा रस भोगने के लिए कपट करने लगी। पति से छुपकर अकेली ही खोमचेवाले से कुछ लेकर खा जाती थी। इसी शिक्षा की कमी सुमन के पास थी।

सुमन के विषय में टिप्पणी करते हुए प्रेमचंद लिखते हैं- "उसने अपने घर में यही सीखा था कि मनुष्य को जीवन में सुख-भोग करना चाहिए।

उसने कभी वह धर्म-चर्चा न सुनी थी, वह धर्म-शिक्षा न पाई थी, जो मन मे संतोष का बीजारोपण करती है। उसका हृदय असंतोष से व्याकुल रहने लगा।" [31]

सुमन का दाम्पत्य जीवन नष्ट हो जाता है असंतोषी सुमन, पति द्वारा, घर से निकाल दी जाती है और इसके बाद उसे . . . वेश्या वृत्ति अपनानी पडती है।

गृहिणी बनने के लिए जैसी शिक्षा चाहिए वैसी ' कर्मभूमि ' उपन्यास की सुखदा की बाल्यावस्था की शिक्षा नहीं है। वह अपनी विधवा माता की इकलौती पुत्री है। उसके परिवार में धन की कोई कमी नहीं अत: उसकी माता ने बेटे की साध बेटी से पूरी की थी। त्याग की जगह भोग शील की जगह तेज, कोमल की जगह तीव्र का संस्कार किया था। सिकुडने और सिमटने का उसे अभ्यास न था।" [32]

अपने पति [अमर] से उसकी कभी नहीं पटती, यहाँ तक कि अमर उसकी विलासिता और शासन-भावना से तंग आ कर सकीना की ओर आकृष्ट होता है और एक दिन घर छोड देता है।

यदि पति, पत्नी से विश्वासघात करता है या वेश्यागामी होता है, तो स्वभावत: पत्नी का हृदय सदैव दु:खपूर्ण बना रहता है। ' गोदान ' उपन्यास की गोविंदी, जो प्रेमचंद द्वारा आदर्श नारियों में परिगणनीय है, सब कुछ सहती है, किंतु पति की प्रेयसी मालती का शासन न सह पाने के कारण पति से अलग रहने का निश्चय करने को बाध्य है। "उसके हाथों मेरा सौभाग्य लूटा जा रहा है। आप अगर मेरी रक्षा कर सकते हैं, तो कीजिए। मैं आज घर से इरादा करके चली थी फिर लौटकर न आऊँगी।..... लेकिन आज मैं आपसे आँचल फैलाकर भिक्षा माँगती हूँ। मालती से मेरा उध्दार कीजिए। मैं इस मायाविनी के हाथों मिटी जा रही हूँ।" [33]

` कर्मभूमि ` उपन्यास की सुखदा विलास को जीवन की सबसे काम्य वस्तु समझती है, जब कि उसका पति [अमरकांत] त्याग को सर्वाधिक महत्व देता है। यह स्वभाव- भिन्नता तो है ही परंतु दोनों में परस्पर सहानुभूति और सहृदयता भी नहीं थी।

` गोदान ` उपन्यास में गोबर झुनियाँ को अपने साथ शहर ले आया, तो उसे अपनी कोठरी पिंजरे-सी तंग लगती। वह उसमें अकेली बैठी रोया करती। उसके पुत्र लल्लू की तबीयत खराब होती है और सप्ताह के अंदर उसका देहांत होता है। उसकी स्मृति उसे रुलाने लगती है। ऐसी स्थिति में गोबर विषय-भोग की लालसा कुछ दिनोंतक संयत न रख सका, तो उसे और भी दु:ख हुआ। "उसके [झुनियाके] शोक में भाग लेकर उसके उन्तर्जीवन में पैठ कर, गोबर जीवन के सूखे तट पर आ कर प्यासा लौट जाता था।" [34]

` प्रतिज्ञा ` उपन्यास में कमलाप्रसाद और सुमित्रा के दुख: पूर्ण दाम्पत्य जीवन के लिए अधिक दोषी कमला प्रसाद है, वह उसकी भावनाओं से अधिक महत्व रूपए को देता है और रात में देर से घर लौटता है तो सुमित्रा दु:ख और व्यंग्य से कहती है- " अभी नहीं बारह तो बजे हैं। इतनी जल्दी क्या आएँगे ? न एक, न दो, न तीन। मेरा विवाह तो इस महल से हुआ है। लाला बदरी प्रसाद की बहू हूँ, इससे बडे सुख की कल्पना कौन कर सकता है ? भगवान ने किसलिए मुझे जन्म दिया, समझ में नहीं आता। इस घर में मेरा कोई अपना नहीं है, बहन। मैं जबरदस्ती पडी हूँ, मेरे मरने-जीने की किसी को परवा नहीं है।" [35]

दाम्पत्य जीवन में बहुधा पति की ओर से पत्नी के प्रति उपेक्षा, अपमान, अनादर, कटुता, निष्ठुरता, शासन और उदण्डता का प्रदर्शन होता है। स्त्री भी हमेशा देवी नहीं होती, किंतु हिंदू-समाज में पति की प्रभुता होने के कारण इन बातों की संभावना पुरुष की तरफ से अधिक होती है। जालपा अपना दु:ख व्यक्त करते हुए कहती है- " मुझे तो ऐसी कोई स्त्री

न मिली, जिसने अपने पति की निष्ठुरता का दुखड़ा न रोया हो। साल-दो साल तो वह खूब प्रेम करता है, फिर न जाने क्यों उन्हें स्त्री से अरुचि-सी हो जाती है।" [३६]

इस प्रकार प्रेमचंद ने अपने उपन्यासों में दाम्पत्य जीवन के संघर्षों के मूल कारणों पर जगह-जगह प्रकाश डाला है, पर वे इन मूल कारणों पर समाज का ध्यान आकृष्ट करके ही संतोष नहीं कर लेते, बल्कि सुखी दाम्पत्य जीवन का मार्ग भी बताते हैं। स्त्री-पुरुष के मधुर सम्बन्धों के लिए प्रेमचंद उनमें चरित्रगत और स्वभावगत कुछ बातें चाहते हैं, जो एक पक्षीय नहीं है।

' कायाकल्प ' में रोहिणी कहती है- "सिता बनने के लिए राम जैसा पुरुष चाहिए।" [३७]

' वरदान ' में चन्द्रा और राधाचरण के सुखी दाम्पत्य जीवन के सम्बन्ध में प्रेमचंद लिखते हैं, "चंद्रा मे चाहे और गुण न हो परंतु पति की सेवा वह तन-मन से करती थी..... इन्हीं कारणों ने राधाचरण को स्त्री का वशीभूत बना दिया था। प्रेम, रूप, गुण आदि सब त्रुटियों का पूरक है।" [३८]

निष्कर्ष

इस प्रकार प्रेम, सहानुभूति, सेवा, त्याग, सहिष्णुता, उदारता, समझौता और पुरुष तथा नारी-मनोविज्ञान की जानकारी के अभाव को और अभिमान, निष्ठुरता, अपेक्षा, अपमान, शासन, कपट, मनोमालिन्य, असंतोष, विलासिता आदि को प्रेमचंद दुखी दाम्पत्य जीवन का मूल कारण मानते हैं। साथ ही, यह भी द्रष्टव्य है कि जब दाम्पत्य जीवन में एक मूर्खता या अविवेक से पूर्ण व्यवहार करे, तो दूसरे का कर्तव्य है कि वह धैर्य और विवेकसे काम ले। विद्रोह और प्रतिकार की भावनाएँ तो यहाँ विष का काम करती है। जिसके प्रति शत्रु-भावना होती है, उसका सुधार नहीं होता, बल्कि पारस्परिक सम्बन्ध और भी बुरा हो जाता है। पति से स्वतंत्र हो जाने या अलग हो जाने

से दु:ख का अंत नहीं हो सकता। समझदारी से काम लेने में ही दोनों का कल्याण है। अहंकार को मिटा कर और सेवा, त्याग का जीवन अपना कर एक-दूसरे से समझौता करना ही होगा।

४] शिक्षा की समस्या

प्रेमचंद केवल उपन्यासकार, कहानी कार, नाटककार व पत्रकार ही नहीं थे, वरन समाज के विभिन्न अंगोंपर दृष्टिपात करनेवाले एक जागरूक चिंतक थे।

मानव-जीवन को सुसंस्कृत करने और उसे पूर्ण विकास की ओर ले जाने में शिक्षाका स्थान सर्वोपरि है। प्रेमचंद शिक्षा जैसे महत्वपूर्ण विषय को कैसे छोड सकते हैं। अत: उनके उपन्यासोंमें तत्कालीन शिक्षा-पध्दतीत, उसके दोषों और उसे सुधारने अथवा बदलने की जटिल समस्या काभी समावेश किया है।

प्रेमचंद के जीवन काल में नारियाँ शिक्षा ले सकती थी लेकिन यह शिक्षा प्राय: शिक्षित समाज के समृध्द वर्ग तक ही सीमित थी। जनसाधारण के पास इसके लिए न तो पर्याप्त साधन थे, न विशेष रुचि ही थी।

जो शिक्षित युवतियाँ अविवाहित रह कर नौकरी करती हैं, उनके इस प्रकार के जीवन अपनाने के पीछे कैसी स्वार्थपरता और विलासप्रियता छिपी होती है। `गोदान` उपन्यास की मालती इंगलैण्ड से डॉक्टरी पढ कर लौटती है और डॉक्टरी पेशा अपनाती है, किंतु उसके जीवन में भी स्वार्थ, भौतिक सुखोपलब्धि और विलासिता की प्रधानता है। मालती पर आधुनिक

आधुनिक शिक्षा और सभ्यता का कैसा प्रभाव पड़ा है, प्रेमचंद ने इसका वर्णन थोड़े से व्यंग्यपूर्ण शब्दों मे किया है- " आप नवयुग की साक्षात प्रतिमा है। गात कोमल पर चपलता कूट-कूट कर भरी हुई। झिझक या संकोच का नाम नहीं, मेक-अप में प्रवीण, कला की हाजिर-जवाब, पुरुष-मनोविज्ञान की अच्छी जानकार, अमोद-प्रमोद को जीवन का तत्व समझने वाली, लुभाने और रिझाने की कला में निपुण, जहाँ आत्मा का स्थान है, वहाँ प्रदर्शन, जहाँ हृदय का स्थान है, वहाँ हाव भाव, मनोद्गारों पर कठोर निग्रह, जिसमें इच्छा या अभिलाषा का लोप-सा हो गया है। " ३९

` कर्मभूमि ` में सलीम का यही आदर्श है कि शिक्षा लेने से कोई ऊँचा सरकारी पद ग्रहण कर सके। " वह एम. ए. की तैयारी कर रहा था। उसकी अभिलाषा थी कि कोई अच्छा सरकारी पद पा जाय और चैन से रहे। सुधार और संगठन और राष्ट्रीय आंदोलन से उसे विशेष प्रेम न था " ४०

` प्रेमाश्रम ` के आरंभ में ग्रामीणों के मुख से प्रेमचंद आधुनिक विद्या पर व्यंग्य करवाते हुए लिखते हैं, दुखरन कहता है, "कहते हैं कि ` विद्या ` से आदमी की बुध्दि ठीक हो जाती है, पर यहाँ उलटा ही देखने में आता है। यह हाकिम अमले पढ़े-लिखे विद्वान होते हैं, लेकिन किसी को दया-धर्म का विचार नहीं होता। " ४१

` कर्मभूमि ` उपन्यास का आरंभ ही आधुनिक शिक्षापर व्यंग्य के साथ होता है। शैक्षणिक संस्थाओंका यथार्थ चित्रण करते हुए प्रेमचंद लिखते हैं- " हमारी स्कूलों और कालेजों में जिस तत्परता से फीस वसूल की जाती है, शायद मालगुजारी भी उतनी सख्ती से नहीं

वसूल की जाती। महिने में एक दिन नियत कर दिया जाता है। उस दिन फीस दाखिल न हो, रोज कुछ जुर्माना दीजिए। कहीं-कहीं ऐसा भी नियम है कि उसी दिन फीस दुगुनी कर दी जाती है, और किसी दूसरी तारीख को फीस दुगुनी न दो, तो नाम कट जाता है। " ४२

प्रेमचंद ने शिक्षा का उद्देश्य रोजी रोटी प्राप्ति कभी नहीं समझा रोजी रोटी को शिक्षा का सिध्दांत मानने वालों के वे कडे विरोधी थे। ' कायाकल्प ' में प्रेमचंद का आदर्श पात्र चक्रधर शिक्षा और नौकरी पर अपना स्पष्ट मत अपने पिता वज्रधर के सामने रखता है- "चक्रधर-मेरी नौकरी करने की इच्छा नहीं है। "

वज्रधर- "यह खब्त तुम्हें कबसे सवार हुआ ? नौकरी के सिवा और करोगे ही क्या ?"

चक्रधर-"मैं आजाद रहना चाहता हूँ।"

वज्रधर-"आजाद रहना था तो एम. ए. क्यों पास किया ?"

चक्रधर-"इसलिए की आजादी का महत्व समझूं।" ४३

प्रेमचंद को यह बात हास्या स्पद मालूम होती थी, "आदमी केवल पेट पालने के लिए आधी उम्र पढने में लगा दे। अगर पेट पालना ही जीवन का आदर्श है, तो पढने की जरूरत ही क्या ? मजदूर एक अक्षर भी नहीं जानता, फिर भी वह अपने और अपने बाल-बच्चों का पेट मजे से पाल लेता है। विद्या के साथ जीवन का आदर्श कुछ ऊँचा न हुआ, तो पढना व्यर्थ है। " ४४

अत: प्रेमचंद की दृष्टि में शिक्षा का प्रयोजन जीवन के आदर्श को ऊँचा उठाना है।

आज के विश्वविद्यालयों और महा-विद्यालयों पर अपने पात्र वज्रधर व्दारा टिप्पणी करवाते हुए प्रेमचंद लिखते हैं- "जैसे और भी चीजे बनाने के कारखाने खुल गए हैं, उसी तरह विद्वानों के कारखाने हैं और

उनकी संख्या हर साल बढती जाती है। " ४५

पश्चिमी आदर्शों से प्रभावित शिक्षा पध्दति पर छात्र अमरकांत के मुख से प्रेमचंद बडा तीखा व्यंग्य करवाते हैं- "बताना क्या है, पश्चिमी सभ्यता की बुराईयाँ हम सब जानते ही हैं। वही बयान कर देना। "

"तुम जानते होंगे मुझे तो एक भी नहीं मालूम।"

"एक तो यह तालीम ही है, जहाँ देखो वहीं दुकानदारी। आदालत की दुकान, इल्म की दुकान, सेहत की दुकान। इस एक पाईंट पर बहुत कुछ कहा जा सकता है।" ४६

अब हमें यह देखना होगा कि प्रेमचंद किस प्रकार की शिक्षा और शैक्षणिक संस्था पसंद करते हैं। उनकी उपर्युक्त बातों से यह भली-भाँति स्पष्ट हो जाता है कि वे शिक्षा व्दारा चरित्र-निर्माण को प्रमुखता देते हैं।

' कर्मभूमि ' में डॉ. शान्तिकुमार के बंगले में प्रेमचंद एक पाठशाला लगवाते हैं जहाँ- "फीस बिलकुल न ली जाती थी।..... छोटे-छोटे, भोले-भाले निष्कपट बालको का कैसे स्वाभाविक विकास हो, कैसे साहसी, संतोषी, सेवाशील बन सके यही मुख्य उद्देश्य था। सौंदर्य बोध जो मानव प्रकृति का प्रधान अंग है, कैसे दूषित वातावरण से अलग रहकर अपनी पूर्णता पाये, संघर्ष की जगह सहानुभूति का विकास कैसे हो, दोनों मित्र यही सोचते थे। उनके शिक्षा की कोई बनी-बनाई प्रणाली न की उद्देश्य को सामने रखकर ही वह साधनों की व्यवस्था करते थे। आदर्श महापुरुषों के चरित्र सेवा और त्याग की कथाएँ, भक्ति और प्रेम के पद यही शिक्षा के आधार थे। " ४७

इस पाठशाला को अमरकांत, शांतिकुमार सन्यासी आत्मानंद आदि जी जान से आदर्श संस्था बनाने में जुट जाते हैं। तरह-तरह

के लोग इस नयी संस्था और उसके कार्यकर्ताओं की तरह-तरह से आलोचना करते हैं। कोई इसे ` मदारी तमाशा ` कहता है तो कोई कुछ। आर्थिक कठिनाइयाँ अलग-अलग हैं। पर फिर भी अपने आदर्शों पर अविचल विश्वास के साथ पाठशाला के संस्थापक तथा कार्यकर्ता पाठशाला का विकास करते चले जाते हैं और प्रेमचंद इस संस्था को आगे चलकर अपने सिध्दांत और आदर्शों के अनुरूप विकसित करके दिखाते हैं। "अमर की शाखा अब नई इमारत में आ गयी थी। शिक्षा का लोगोंको कुछ ऐसा चस्का लगा था कि जवान तो जवान और बूढे भी आ बैठते और कुछ न कुछ सीख जाते। अमर की शिक्षा शैली आलोचनात्मक थी। अन्य देशों की सामाजिक और राजनैतिक प्रगती नये-नये अविष्कार, नये-नये विचार इसके मुखय विषय थे। देश-देशान्तरों के रस्मों-रिवाज, आचार-विचार की कथा सभी चावसे सुनते। उसे यह देखकर कभी-कभी विस्मय होता था कि वे निरक्षर लोग जटिल सामाजिक सिध्दांतों को कितनी आसानी से समझ जाते हैं।" ४८

प्रेमचंद धर्मविहीन शिक्षा के विरोधी थे पाश्चात शिक्षा भौतिक विकास के उद्देश्य को अपना लक्ष मानकर चलती है, आत्मिक विकास के लिए उसमें कोई व्यवस्था नहीं। प्रेमचंद भौतिक और आत्मिक दोनों तत्वों से युक्त शिक्षा के समर्थक थे। एकांगी शिक्षा ग्रहण से एकांगी विकास ही संभव है। भौतिक शिक्षा में यह एकांगी विकास मनुष्य को स्वार्थी बना देता है। ` प्रेमाश्रम ` में रायसाहब ज्ञानशंकर से कहते हैं, " यह तुम्हारा दोष नहीं तुम्हारी धर्मविहीन शिक्षा का दोष है। तुम्हें आदि से ही भौतिक शिक्षा मिली है। हृदय के भाव दब गये। तुम्हारे गुरूजन स्वयं स्वार्थ के पुतले थे। उन्होंने कभी सरल-संतोषमय जीवन का आदर्श तुम्हारे सामने नहीं रखा।" ४९

निष्कर्ष

प्रेमचंद ने शिक्षा का महत्व ..... समझाते हुए यह कहने का प्रयास

किया है कि वही शिक्षा शिक्षा कहलाने योग्य है जिससे युवको में कर्तव्य की भावना, समन्वय, मेल- . जोल, आदान-प्रदान की भावना का निर्माण हो। प्रेमचंद ने शिक्षा का उद्देश्य रोटी प्राप्ति कभी नहीं समझा। अत: प्रेमचंद की दृष्टि में शिक्षा का प्रयोजन जीवन के आदर्श को ऊंचा उठाना है।

५] अछूत की समस्या

अछूत की समस्या समाज की भयंकर बीमारी है। छुआछूत की भावना हिंदू समाज के अधिकांश जनों में व्याप्त है। अपढ ग्रामीण स्त्री-पुरुष हो या पढे-लिखे नागरिक, दोनों अपने को इस सामाजिक कुरीति से मुक्त नहीं कर सके। प्रेमचंद को छुआछूत से नफरत थी। प्रेमचंद ने हिंदू समाज में पाये जाने वाले इस अमानवीय भाव को दूर करने और अछूत वर्ग के स्वाभिमान को जागृत करने का भरसक प्रयास किया।

अछूत वर्ग के अंतर्गत प्रेमचंद ने केवल चमारो के जीवनपर प्रकाश डाला है। किसी विशिष्ट जाति को लेकर प्रेमचंद ने जो विचार व्यक्त किए हैं वे वास्तव में उस जाति विशेष तक ही सीमित न रहकर उस वर्ग के ही बन गए हैं। अत: चमारों के रहन-सहन उनकी सामाजिक और आर्थिक स्थिति आदिका जहाँ कहीं चित्रण किया गया है, वहाँ समस्त अछूत वर्ग का ही चित्रण समझना चाहिए।

` कर्मभूमि ` में उन्होंने विस्तार से इस समस्या पर लिखा है। ` प्रतिज्ञा `, ` गोदान ` इन उपन्यासों में यत्र-तत्र अछूतो की समस्या पर प्रकाश डाला है। समाज-सुधारक अछूतों को मंदिर-प्रवेश करा देने में ही अछूतों की समस्या का समाधान समझ बैठे है। वास्तव में मंदिर-प्रवेश से अछूतों के जीवन में कोई परिवर्तन नहीं आता। जब तक समाज में तथा कथित अछूत वर्ग और उसके कर्म के प्रति सम्मान-भाव उत्पन्न नहीं

होता ... तब तक उसके जीवन में क्रांति नहीं आ सकती।

` कर्मभूमि ` का अमर विदेशी के रूप में एक पहाडी गांव में पहुँचता है, जहाँ रैदास रहते हैं। अमर की मुलाकात एक बुढिया से होती है तब वह उस बुढिया को कहता है- " मैं जांत-पांत नहीं मानता, माताजी। जो सच्चा है वह चमार भी हो, तो आदर के योग्य है, जो दगाबाज, झूठा, लम्पट हो, वह ... ब्राम्हण भी हो तो आदर के योग्य नहीं। " [५०]

प्रेमचंद ने चमारों की आर्थिक स्थिति का भी चित्रण अपने उपन्यास में किया हैं। ` कर्मभूमि ` में बुढिया रैदास की झोपडी इसका भयावह चित्र प्रस्तुत करती है- "अमर झोपडी में गया, तो उसका हृदय काप उठा, मानो दरिद्रता छाती पीट-पीटकर रो रही है! और हमारा उन्नत समाज विलास में मग्न है। उसे रहने को बंगला चाहिए, सवारी को मोटार इस संसार का ... विध्वंस क्यों नहीं हो जाता। " [५१]

आर्थिक स्थिति के साथ-साथ चमारों की सामाजिक स्थिति भी किस प्रकार भयावह है इसका चित्रण प्रेमचंद बालकों के मुख से करवाते हैं। अमर बालकों से पूछता है- "कहाँ पढने जाते हो ? बालक ने नीचे का ओंठ सिकोडकर कहा- कहाँ जाये, हमें कौन पढाये ? मदरसे में कोई जाने तो नहीं देता। एक दिन दादा हम लोगोंको लेकर गए थे। पंडित जी ने नाम लिख लिया, पर हमें सबसे अलग बैठाए थे। सब लडके हमें `चमार-चमार` कहकर चिढाते थे। दादा ने नाम कटा दिया। " [५२]

अगर हमारे सामाजिक स्तर को ऊंचा उठाना हो तो इस समाज में शिक्षा का प्रसार करना जरुरी है।

प्रेमचंद ने अछूत वर्ग के चित्रण में कम रुचि नहीं दिखाई है। उन्होंने अछूत वर्ग का सिर्फ चित्रण ही नहीं किया वरन उसमें वर्ग-चेतना की आग भडकती बताई। वे प्रत्येक अनीति और अत्याचार का कडा विरोध करते हैं। इसी पहाडी गाँव का चौधरी गूदड अमर से कहता है- " भगवान ने छोटे-बडे का भेद क्यों लगा

दिया, इसका मरम समझ में नहीं आता। उसके तो सभी लड़के हैं फिर भी सबको एक आँख से क्यों नहीं देखता ?" [५३]

'कर्मभूमि' में अछूतों की समस्या का दूसरा पहलू मंदिर-प्रवेश का है जो एक सीमा तक उनकी प्रतिष्ठा से सम्बन्ध है। एक महीने से ठाकुरद्वारे में पंडित मधुसूदन जी की कथा हो रही है। एक दिन सहसा पिछली सफों में हंगामा हो जाता है। यह हंगामा मंदिर में बैठे अछूतों को लेकर होता है- "ब्रम्हचारी-लोग भगवान की कथा सुनने आते हैं कि अपना धर्म भ्रष्ट करने आते हैं ? भंगी-चमार, जिसे देखो, घुसा चला आया है। ठाकुर जी का मंदिर न हुआ, सराय हुई।" [५४]

प्रेमचंद इन धर्म के तथाकथित ठेकेदारों से कहीं समझौता नहीं करते। डॉ॰ शांतिकुमार के स्वर में प्रेमचंद कहलाते हैं- "अन्धे भक्तों की आँखों में धूल झोंककर यह हलवे बहुत दिन खाने को न मिलेंगे महाराज समझ गये ? अब वह समय आ रहा है, जब भगवान भी पानी से स्नान करेंगे, दूध से नहीं।" [५५]

चमारों के सामाजिक बहिष्कार के कुछ कारण भी प्रेमचंद बताते हैं। प्रेमचंद ने स्पष्ट कहा है कि चमडे के जूते बनाने से कोई जाति निकृष्ट नहीं हो जाती, लेकिन इस बात को स्वीकार करने पर भी चमारों में पाये जाने वाले दोषोंपर परदा नहीं डाला जा सकता। मुर्दा गाय के मांस खाने के सम्बन्ध में प्रेमचंद एक युवक को माध्यम बनाकर कहलाते हैं- "मरी गाय के मांस में ऐसा कौन सा मजा रखा है, जिसके लिए सब जने मरे जा रहे हो। गड्ढा खोदकर मांस गाड दो, खाल निकाल लो।........ सारी दुनिया हमें इसलिए तो अछूत समझती है कि .... मुरदा मांस खाते हैं और चमडे का काम करते हैं। और हम में बुराई क्या है ?............ फिर मुरदा मांस में क्या रखा है ? रहा चमडे का काम, उसे कोई बुरा नहीं कह सकता, और अगर कहे भी तो हमें उसकी परवाह नहीं। चमडा बनाना-बेचना बुरा काम नहीं।" [५६]

धर्म की व्याख्या करते हुए प्रेमचंद कहते हैं अछूतों के सामाजिक सम्मान को बढाने के लिए वर्णवादियों की दूषित मनोवृतियों पर प्रहार करना होगा। मंदिर में कथा होती है ? उस समय डॉ. शांतिकुमार प्रवचन दे रहे हैं- "क्या तुम ईश्वर के घर से गुलामी करने का बीडा लेकर आये हो ? तुम तन-मन से दूसरों की सेवा करते हो। पर तुम गुलाम हो। तुम्हारा समाज में कोई स्थान नहीं। तुम समाज की बुनियाद हो। तुम्हारे ऊपर समाज खडा है, पर तुम अछूत हो। तुम मंदिर में नहीं जा सकते। .... मंदिर किसी एक आदमी या समुदाय की चीज नहीं है। वह हिंदू मात्र की चीज है। यदि तुम्हें कोई रोकता है तो उसकी जबरदस्ती है। मत टलो इस मंदिर के व्दार से, चाहे तुम्हारे ऊपर गोलियों की वर्षा ही क्यों न हो।" ५७

अछूतों का सबसे करूण चित्रण कर्मभूमि में है। कई आदमी जूते लेकर उन गरीबों पर टूट पडते हैं। भला इससे बढकर अधर्म और क्या हो सकता है ? डॉ. शांतिकुमार भक्तों को धिक्कारते हैं- "वाह रे ईश्वर के भक्तों! वाह! क्या कहना-तुम्हारी भक्ति का! जो जितने जूते मारेगा, भगवान उसपर उतने प्रसन्न होंगे।.............. आप लोगों ने हाथ क्यों बंद कर लिए ? लगाइए कस-कसकर। और जूतों से क्या होता है, बंदुके मँगाइए और धर्म-द्रोहियों का अंत कर डालिए।" ५८

कडा संघर्ष करने के पश्चात अछूतोंका मंदिर में प्रवेश होता है। प्रेमचंद ने यह मंदिर प्रवेश कोई गांधीवादी ढंगपर चित्रित नहीं किया। प्रेमचंद उस विराट जन-समूह के बलिदानों की गाथा लिखने के बाद उसकी विजय का चित्र खींचते हैं- "संध्या समय इन धर्म विजेताओंकी अर्थियां निकली। सारा शहर फट पडा! जनाजे पहले मंदिर-व्दार पर गये। मंदिर के दोनों व्दार खुले हुए थे।.............. इन्हीं व्दारों को खुलवाने के लिए यह भीषण संग्राम हुआ अब वह व्दार खुला हुआ है, वीरों का स्वागत करने के लिए हाथ

फैलाये हुए हैं, पर यह रुठने वाले अब द्वार की ओर आँख उठाकर भी नहीं देखते कैसी विचित्र विजेता है। जिस वस्तु के लिए प्राण दिये उसी से इतना विराग। " ५९

अछूत और निम्न वर्ग के रहन-सहन का स्तर जितना भयावह गांव में है उतना ही नगरों में। उनके रहने के स्थान साक्षात नरक है। 'कर्मभूमि' में दलित वर्ग के मकानों की समस्या को भी उठाया है। म्युनिसिपल बोर्ड और उसके कर्णधार केवल धनियों की सेवा करने में अपने कर्तव्य की इतिश्री समझते हैं। गरीबों की झोपडियों की ओर कोई ध्यान नहीं देता नगर की सभी दलित जातियाँ इस उपेक्षा और अत्याचार के विरुध्द संगठित होकर अपना स्तर ऊँचा उठाने के लिए आंदोलन करती हैं।

निष्कर्ष

प्रेमचंद ने प्रस्तुत समस्यापर प्रकाश डालने के पश्चात अछूत समस्या का समाधान यह बताया है कि शासकों और कुलीन कहलाने वालों को चाहिए कि वे दलितों को सीधे-सीधे मानवीय अधिकार प्रदान करे। अन्यथा अब समय आ गया है कि अछूत मौन बैठने वाले नहीं। वे कभी भी विद्रोह की आग भडका सकते हैं। प्रेमचंद ने समाज के ठेकेदारों को चेतावनी देकर उक्त समस्यापर भली-भाँति प्रकाश डाला है।

६] रियासतों की समस्या

भारतीय रियासतें स्वतंत्रता-प्राप्ति में एक बडी रुकावट थी। इन प्रदेशोंकी जनता की स्थिति ब्रिटिश शासकोंसे भी बुरी रही। राजाओं में नैतिक बल बिल्कुल न था। वे ब्रिटिश शासकों के संकेतोंपर नाचने वाले मात्र कठपुतली थे। एक समय था जबकि राजा ईश्वर का अवतार माना जाता था। जनता उसका सम्मान करती थी। किंतु ' राजावाद ' में जो मूल दोष थे, वे आगे सामने आए और राजतत्ता दूषित हो उठी।

प्रेमचंद ने रियासतों और देशी नरेशों की तत्कालीन स्थिति का ' रंगभूमि ' और ' कायाकल्प ' में विस्तार से उल्लेख किया है तथा उनके भविष्य पर भी प्रकाश डाला है।

' रंगभूमि ' में चातरी के राजा महेंद्रकुमार सिंह अपनी पत्नी इंदु से जो अनेक पक्षों पर वार्तालाप करते है, वह उनके वास्तविक रूप को सामने ला देता है। सेवा समितियों से सहानुभूति रखना भी उनके लिए आपत्तिजनक है - "तुम्हारी समझ में और मेरी समझ में बडा अंतर है। यदि मैं बोर्ड का प्रधान न होता यदि मैं शासन का एक अंग न होता, अगर मैं रियासत का स्वामी न होता, तो स्वच्छंदता से प्रत्येक सार्वजनिक कार्य में भाग लेता।" [६०]

समिति के सेवक गढवाल जाने के लिए स्टेशन पर एकत्र हो रहे थे। इंदु अपने पति महेंद्रकुमार सिंह की कायरता की पर्याप्त भर्त्सना करके विनय से मिलने और समिति के सेवकों को विदा देने स्टेशन जाती है। उसके जाने पर राजा साहब सोचने लगे, "इसको जरा भी चिंता नहीं कि हुक्काम के कानों तक यह बात पहुँचेगी, तो वह मुझे क्या कहेंगे। समाचार-पत्र के सवांददाता यह वृत्तांत अवश्य ही लिखेंगे, और उपस्थित महिलाओं

में चातरी की रानी का नाम मोटे अक्षरों में लिखा हुआ नजर आएगा।" [61]

इंदु के दुर्व्यवहार पर सोफिया के मुख से प्रेमचंद कहलवाते है- "इसे अपनी रियासत का घमंड है, मैं दिखा दूँगी कि वह सूर्य का स्वयं प्रकाश नहीं, चाँद की पराधीन ज्योति है। इसे मालूम हो जायगा कि राजा और रईस, सबके-सब शासनाधिकारियों के हाथ के खिलौने हैं।" [62]

सूरदास पर अत्याचार किए जाने के निर्णय पर सोफिया मिस्टर क्लार्क को इस बात का परिचय देती है कि राजा साहब इसका घोर विरोध करेंगे, इस पर मिस्टर क्लार्क किस ढंग का उत्तर देते है- "धूह। उनमें इतना नैतिक साहस नहीं हैं। वह जो कुछ करते हैं, हमारा रुख देखकर करते हैं।" [63]

' कायाकल्प ' में भी प्रेमचंद राजा साहब विशालसिंह का व्यक्तित्व इसी रंग में रंगकर चित्रित करते हैं। विशालसिंह के राजगद्दी के उत्सव में शामील होने के लिए दूर-दूर से राजा-महाराजा आए। प्रेमचंद उनके कैम्प का वर्णन करते हुए लिखते हैं- "बडे-बडे नरेश आए थे। कोई घुने हुए दरबारियों के साथ, कोई लाव-लश्कर लिए हुए।..... कोई रत्नजटित आभूषण पहने, कोई अंग्रेजी सूट से लैस कोई इतना विद्वान कि विद्वानों में शिरोमणि, कोई इतना मूर्ख कि मूर्ख-मंडली की शोभा।" [64]

उसी कैम्प के राजाओं का चित्रण करते हुए प्रेमचंद लिखते है- "राजा-रईस अपनी वासनाओं के सिवा और किसी के गुलाम नहीं होते।" [65]

इस प्रकार राजाओं की ' पुरुषता तथा उनके विलासी जीवन का चित्रण ' रंगभूमि ' और ' कायाकल्प ' में स्पष्ट रूपमें किया गया है। इन राजाओं और रियासतों के अस्तित्व के पीछे जो कारण है उनका स्पष्टिकरण इंदु के मुख से प्रेमचंद करवाते है- "हमारे पूर्वजों ने अंग्रेजो की इस समय प्राण रक्षा की थी, जब उनकी जानों के लाले पडे हुए थे। सरकार उन अहसानों को मिटा नहीं सकती।" [66]

रियासती अफसरों के मनमाने अत्याचारों का वर्णन ` कायाकल्प ` में भी विस्तार से किया गया है। मनोरमा चक्रधर से कहती है- "अभी एक गोरा आ जाए, तो घर में दुम दबाकर भागेंगे। उस वक्त जबान भी न खुलेगी। उससे जरा आँख मिलाईए तो देखिए, ठोकर जमाता है या नहीं।" ६७

निष्कर्ष

आदर्श राजाओं की बात अब कल्पना में ही सत्य हो सकती है। प्रेमचंद इस तथ्य से भली-भाँति परिचित थे, इसलिए उन्होंने इस आदर्श व्यवस्था को पुनर्जीवित करने का प्रयत्न नहीं किया। समय बदलनेपर आदर्श [illegible] भी बदलते हैं। प्रजा अपने राजा, जागीरदार यहाँ तक कि अपने जमींदार पर सिर कटा देती थी। राजा भोक्ता है प्रजा भोग्य है। यही सृष्टिका नियम था, लेकिन आज राजा और प्रजा में भोक्ता और भोग्य का सम्बन्ध नहीं हैं। जन-सेवक और सेव्य का सम्बन्ध है अब अगर राजा की कोई इज्जत है तो उसकी सेवा प्रवृति के कारण। रियासतों और देशी नरेशों का सारा दबदबा अंग्रेजी सत्ता के कारण ही था। यह बात आज सिध्द हो चुकी है।

७] साम्प्रदायिक समस्या

यहाँ साम्प्रदायिकता से अभिप्राय हिंदू-मुसलमान संप्रदायों से है। भारत में हिंदुत्व और इस्लाम के झगडे बहुत पुराने समय से चले आ रहे हैं। अतः हिंदू-मुस्लिम एकता की समस्या नई नहीं है। हिंदूओं और मुसलमानों को आपस में लडाकर अंग्रेजो ने भारत में अपने शासन की नींव मजबूत की और [illegible] फूटनीतिके तौर-तरीकों से ऐसी भयावह स्थिति पैदा कर दी कि उक्त समस्या दिन-पर दिन उलझती ही गई।

प्रेमचंद ने अपने उपन्यासों में जिस तरह अनेक समस्याओं को स्थान दिया है इसी तरह उनमें हिंदू-मुस्लिम एकता की समस्या को भी स्थान दिया गया है। इस संदर्भ में ` कायाकल्प `, ` ` ` कर्मभूमि ` और ` सेवासदन ` उपन्यास विशेष रूपसे उल्लेखनीय हैं।

हिंदू-मुस्लिम झगडों के क्या कारण है ? कौनसे तत्व इन झगडों को उतेजना देते है ? इस समस्या के सुलझाने का यथार्थ और स्थायी हल क्या हो सकता है ? आदि विषयोंपर प्रेमचंद ने अपने विचार उपर्युक्त उपन्यासों में व्यक्त किऐ है।

` कायाकल्प ` में यह समस्या गाय की कुरबानी को मुख्य विषय बनाकर उपस्थित की गई है। इस प्रकार के फसाद कौन करवाते हैं ? आगरा हिंदू सभा के मंत्री यशोदानंदन जब बनारस से लौटकर आगरा आते तो एक थानेदार उसका सामान देखना शुरु करता है। इस पर यशोदानंदन आश्चर्य से पूछते हैं, "क्यों साहब, आज यह सख्ती क्यों है ?

थानेदार-आप लोगों ने जो काटे बोये हैं, उन्हीं का फल है। शहर में फसाद हो गया है।

यशोदा-अभी तीन दिन पहले तो अमन का राज्य था, यह भूत कहाँ से उठ खडा हुआ ? " [६८]

अच्छे-अच्छे लोग धार्मिक भावावेश में आकर हिंसक बन जाते हैं, पथभ्रष्ट हो जाते हैं, मानवताहीन हो जाते हैं। ` कायाकल्प ` के ख्वाजा महमूद जिन्हें हिंदू फरिश्ता समझते थे, जो हिंदू-मुसलमानों की मिली-जुली सेवा समिति के सदस्य थे, मौलवी दीन मुहम्मद साहब की तकरीर से इतने उत्तेजित हो जाते हैं कि कुरबानी को लेकर होनेवाले फसाद का नेतृत्व करने लगते हैं। यशोदानंदन इस कायापलट पर अपना मत प्रकट करता है- "अगर महमूद में सचमुच यह कायापलट हो गई है, तो यही कहूँगा कि धर्म से ज्यादा द्वेष पैदा करनेवाली वस्तु संसार में नहीं है। " [६९]

चक्रधर हिंदू भी उत्तेजित हो जाते हैं। स्वयं यशोदानंदन जिसने अभीतक मानसिक संतुलन नहीं खोया था, चुनौति के स्वर में कहता है- " ख्वाजा महमूद के द्वार पर कुरबानी होगी। उनके द्वार पर इसके पहले यातो मेरी कुर्बानी हो जायगी या ख्वाजा मुहम्मद की। " [७०]

एक गाय के पीछे, एक पशु के पीछे इन्सानों का खून बहाना कभी भी मानवीय नहीं कहा जा सकता गो हत्या यदि पाप है तो मानव-हत्या महापाप। यशोदानंदन से चक्रधर कहता है- "अहिंसा का नियम गोओं के लिए ही नहीं, मनुष्य के लिए भी तो है। " [७१] नि:संदेह गो-हत्या भी जिस दृष्टिकोण से की जाती है वह भी नितांत अनुचित है। मूल कारण मनुष्य की विचार से काम न लेने की प्रवृति है।

सांप्रदायिक समस्या को अंग्रेज साम्राज्यवादियोंने राजनीतिक रूप दे रखा था। फूट डालकर शासन करने की नीयती अपनाकर अंग्रेज अपना प्रभुत्व बनाये रखना चाहते थे। उन्होंने हिंदू-मुस्लिम में भेद-भाव पनपने दिया। दोनों कौमों के सम्बन्ध किस सीमा तक पहूँच चुके थे उनका स्पष्ट वर्णन प्रेमचंद तेगअली के मुँहसे ' सेवासदन ' में करवाते है। "आजकल पोलीटिकल मफाद का जोर है, हक और इन्साफ का नाम न लीजिये। अगर आप मुदर्रिस हैं तो हिंदू लडकों को फेल कीजिए। तहसीलदार है तो हिंदूओंपर टैक्स लगाइए, मजिस्ट्रेट है तो हिंदूओं को सजाएं दीजिए। " [७२]

प्रेमचंद ने सांप्रदायिक समस्या के हल के निमित कई सुझाव अपने उपन्यासों में दिये हैं। सर्वप्रथम धर्म की सच्ची शिक्षा देना आवश्यक है। धर्मान्धता का विरोध करते हुए चक्रधर कहता है- "जब तक हम सच्चे धर्म का अर्थ न समझेंगे, हमारी यही दशा होगी। " [७३]

प्रेमचंद के मतानुसार लोगों को नीति को महत्व देना चाहिए। इसी कारण चक्रधर के मुँह से वे यह कहलवाते हैं- " मैं तो नीति को धर्म समझता हूँ और सभी संप्रदायों की नीति एक-सी है। अगर अंतर है

तो बहुत थोडा। हिंदू-मुसलमान, ईसाई, बौध्द सभी सत्कर्म और सद्विचार की शिक्षा देते हैं।.......... जो इनमे से किसी का अनादर करता है या उनकी तुलना करने बैठता है, वह अपनी मुर्खता का परिचय देता है। बुरे हिंदू से अच्छा मुसलमान उतनाही अच्छा है। जितना बुरे मुसलमान से अच्छा हिंदू। देखना यह चाहिए कि यह कैसा आदमी है, न कि यह किस धर्म का है।" ७४

निष्कर्ष

स्पष्ट है कि प्रेमचंद समस्यामूलक उपन्यासकार है। हिंदू-मुस्लिम एकता के लिए उन्होंने भरसक प्रयास किया। उन्हों ने हिंदू-मुस्लिम एकता के लिए जो अमूल्य संपत्ति सौंपी थी वह अगर काम में लायी जाती तो निश्चय ही यह आतंक पूर्ण रूपसे समाप्त हो गया होता।

८] औद्योगिक समस्या

प्रमुख रूपमें प्रेमचंद ने औद्योगिक समस्या को ' रंगभूमि ' तथा ' गोदान ' में उठाया है। ' रंगभूमि ' में उद्योगपति जॉन सेवक है तो ' गोदान ' में मिस्टर खन्ना। एक तम्बाकू का कारखाना खोलते हैं तो दूसरे शक्कर की मील। प्रेमचंद औद्योगीकरण के विरोधी थे। जमीन पर से एकाधिकार उठाता देखकर अधिकांश पूंजी पतियोंने जगह-जगह बडे-बडे कारखाने खोलकर आधुनिक साधनो के माध्यमसे मजदूरोंका शोषण करना प्रारंभ किया।

' रंगभूमि ' में जॉन सेवक तम्बाकू का कारखाना खोलने के लिए भूमिका तैयार करता हुआ कहता है- "मेरा इरादा है म्युनिसिपैलिटी के चेयरमैन साहब से मिलकर यहाँ एक शराब और ताडी की दुकान खुलवा दूँ।

तब आसपास के चमार यहाँ रोज आएँगे और आपको उनसे मेलजोल पैदा करने का अवसर मिलेगा।" ७५ नगर के हितों की रक्षा करने वाली संस्थाओं को ये पूंजीपति मानों अपनी जेबी संस्था समझते हैं। धन के बल पर खेतों मे गेहूँ-जो के स्थान पर तम्बाकू की खेती करवा लेना भी उनके लिए साधारण बात है।

तम्बाकू की खेती के प्रश्न पर जॉनसेवक पूर्ण विश्वास के साथ कहता है- "कच्चा माल पैदा करना हमारा काम होगा। किसान को ऊख या जौ-गेंहू से कोई प्रेम नहीं होता। वह जिसके पैदा करने में अपना लाभ देखेगा, वही पैदा करेगा।" ७६ इस स्थलपर प्रेमचंद ने उद्योगपतियों की नैतिकता पर तीव्र प्रहार किए हैं। प्रेमचंद के दृष्टिकोण को निम्नलिखित वार्तालाप स्पष्ट कर देता है। स्वार्थी और लाभ-लोभी जॉनसेवक बडा भला बनकर कहता है- " हमारी जाति का उध्दार कला-कौशाल और उद्योग की उन्नति में है। इस सिगरेट के कारखाने से कम से कम एक हजार आदमियों के जीवन की समस्या तो हल हो जाएगी और खेती के सिर से उनका बोझ टल जाएगा। जितनी एक आदमी अच्छीतरह जोत बो सकता है, उसमें घर-भर का लगा रहना व्यर्थ। मेरा कारखाना ऐसे बेकारों को अपनी रोटी कमाने का अवसर देगा।"

कुवरसाहब- "लेकिन तम्बाकू कोई अच्छी चीज तो नहीं। इसकी गणना मादक वस्तुओ में है, और स्वास्थ्य पर इसका बुरा असर पडता है।"

जॉनसेवक-" [हंसकर] ये सब डॉक्टरों की कोरी कल्पनाएँ है, जिन पर गंभीर विचार करना हास्यास्पद है। डॉक्टरों के आदेशानुसार हम जीवन व्यतीत करना चाहें, तो जीवन का अंत ही हो जाए।" ७७

ढोंगी ईश्वर सेवक भी जॉन सेवक का समर्थन करते हुए कहता है,

"खुदा मुझमर दया दृष्टि करे। बेटा, रंग मिलाए बगैर भी दुनिया का कोई काम चलता है ? सफलता का यही मूल मंत्र है, और व्यवसाय की सफलता के लिए तो यह सर्वथा अनिवार्य है।" [७८] अर्थात वह भी तम्बाकू के कारखाने के पक्ष में है भले ही इसमें समाज का हीत न हो।

'गोदान' में मिस्टर खन्ना जो शक्कर मिल के मैनेजिंग डायरेक्टर हैं, अपनी मनोवृत्तिका परिचय देते हैं। शक्कर मिल के जल जानेपर मि. खन्ना स्वयं अपनी नैतिकता को उघारकर हमारे सामने रख देते है- "आप नहीं जानते मिस्टर मेहता, मैंने अपने सिध्दांतों कितनी हत्या की है कितनी रिश्वते दी है कितनी दिश्वते ली हैं। किसानों की उख तोलने के लिए कैसे आदमी रखे।" [७९]

मिस्टर खन्ना अधिक से अधिक मुनाफा कमाने में लगे हुए हैं इसकी निंदा करते हुए मेहता कहते हैं। " क्या आपका विचार है कि मजदूरों को इतनी मजूरी दी जाती है कि उसमें चौथाई कम कर देने से मजदूरों को कष्ट न होगा ? आपके मजूर बिलों में रहते हैं-गंदे बदबूदार बिलों मे, जहाँ आप मिनट भी रह जाए, तो आपको कै आ जाय। कपडे जो वह पहनते हैं, उनसे आप अपने जूते भी न पोंछेंगे। खाना जो वह खाते हैं, वह आपका कुत्ता भी न खाएगा। मैंने उनके जीवन में भाग लिया है। आप उनकी रोटियाँ छीनकर अपने हिस्सेदारों का पेट भरना चाहते है।" [८०] इस प्रकार मजदूर फटेहाल रहते है लेकिन उनका खून चुसकर पैसा इकठ्ठा करने वाले कारखाने वाले उनके दु:ख की ओर ध्यान नहीं देते।

औद्योगीकरण का विरोध प्रेमचंद ने एक और दृष्टिकोण से भी किया है। प्रेमचंद चारित्रिक आदर्शपर विश्वास रखते हैं। वे मजदूरों का नैतिक स्तर उंचा देखना चाहते हैं। औद्योगीकरण से मजदूरों के नैतिक स्तर को उठाने में कोई सहायता नहीं मिलती। ये विचार प्रेमचंद ने 'रंगभूमि' में सूरदास के माध्यम से व्यक्त किए हैं- सूरदास नायकराम को कहता है-

"मुहल्ले की रौनक जरूर बढ जाएगी, रोजगारी लोगोंको फायदा भी खूब होगा, लेकिन जहाँ रौनक बढेगी वहाँ ताडी-शराब का प्रचार भी तो बढ जाएगा, कसबियां तो आकर बस जाएगी, परदेशी आदमी हमारी बहू-बेटियों को घूरेंगे, कितना अधरम होगा। दिहात के किसान अपना काम छोडकर मजूरी के लालच से दौडेंगे, यहाँ बुरी-बुरी बाते सीखेंगे और अपने बुरे आचरण अपने गाँव में फैलाएंगे। देहातों की लडकियाँ, बहुएं मजूरी करने आएंगी और यहाँ पैसे के लोभ में अपना धरम बिगाडेंगी यही रौनक शहरो में है। वही रौनक यहाँ हो जाएगी। भगवान न करे यहाँ वह रौनक हो सरकार मुझे इस कुकरम और अधरम से बचाएं।" ८१

ये सभी सामाजिक दुर्गुण भी औद्योगीकरण के साथ-साथ स्वतः आते हैं जिनके पीछे आधुनिक औद्योगिक व्यवस्था ही ... उत्तरदायी है।

निष्कर्ष

'रंगभूमि' और 'गोदान' में तम्बाकू और शक्कर के कारखाने को प्रतीक मानकर पूंजीपति मनोवृत्ति को प्रेमचंद ने हमारे सामने रखा है और यह बताया है कि ऐसे औद्योगीकरण से जनता का कोई लाभ नहीं हो सकता। उसे तो प्रेमचंद ने शोषण का एक नया हथियार बताया है, जिसके कारण परिणाम कोई कम भयावह नहीं है। किसानों और मजदूरोंका शोषण ज्यों का त्यों बना रहता है।

१] स्वाधीनता पाने की समस्या-

प्रेमचंद भारतीय स्वाधीनता-संग्राम के योध्दा थे। विदेशी सत्ता के साम्राज्यवादी चक्र में दबा-पिसा भारत उनकी रचनाओं में बडे ही मार्मिक ढंग से प्रतिबिम्बित हुआ है।

` कर्मभूमि ` में डॉ. शांतिकुमार के मुख से भी उन्हों ने जनता की सरकार तथा क्रांति का समर्थन किया है- " जब तक रिआया के हाथ में अख्तियार न होगा, अफसरों का यही हाल रहेगा गरीबों की लाश पर सब के सब गिध्दों की तरह जमा होकर उनकी रोटियाँ नोच रहे हैं ..... इस हाहाकार के बुझाने के लिए दो-चार घड़े पानी डालने से तो आग और भी बढ़ेगी। इन्कलाब की जरूरत है, पूरे इन्कलाब की। " ८२

प्रेमचंद वर्गहीन समाज की स्थापना करना चाहते थे, जिसमें अमीर-गरीब का भेद न हो- " गवर्नमिण्ट तो कोई जरूरी चीज नहीं। पढ़े-लिखे आदमियों ने गरीबों को दबाये रखने के लिए एक संगठन बना लिया है। उसी का नाम गवर्नमेंट है, गरीब और अमीर का फर्क मिटा दो और गवर्नमेंट का खात्मा हो जाएगा।" ८३ सर्व हारा वर्ग के प्रति उन्हें स्वाभाविक सहानुभूति थी। वे उसे धनिक वर्ग के सामने अपमानित होते देखना पसंद नहीं करते थे।

प्रेमचंद ने शांत उपायों का सदैव समर्थन किया है। सोफी विनयकुमार से कहती है- " तुम अपने आदर्श से उसी समय पतित हुए, जब तुमने उस विद्रोह को शांत करने के लिए शांत उपायों की अपेक्षा क्रूरता और दमन से काम लेना उपयुक्त समझा। शैतान ने पहली बार तुम पर वार किया और तुम फिर न संभले, गिरते ही चले गये। " ८४

जीवन के अंतिम दिनों में वे बड़े उग्र हो उठे थे। उनके उपन्यासों में भारतीय स्वाधीनता की गूंज सर्व प्रथम ` सेवासदन ` में सुनाई देती है जहाँ कि उन्होंने एक भविष्य द्रष्टा की तरह युरोप के व्यापारिक साम्राज्यवाद के प्रति लिखा है- शिला और कला-कौशल का यह महल उसी समय तक है जब तक संसार में निर्बल, असमर्थ जातियाँ वर्तमान हैं। उनके गले सस्ता माल मढ़कर युरोपवाले चैन करते हैं, पर ज्यों ही ये जातियाँ चौकेगी, युरोप की प्रभुता नष्ट हो जायेगी। " ८५

` सेवासदन ` में आगे चलकर प्रेमचंद सुमन के मुख से अंग्रेजी पढे-लिखे स्वार्थान्धों को खरे शब्दों में ललकारते हैं- " यह सब-के-सब स्वार्थ सेवी है, इन्होंने केवल दीनों का गला दबाने के लिए, केवल अपना पेट पालने के लिए अंग्रेजी पढी है, यह सब-के-सब पैशाच के गुलाम है, जिनकी शिक्षा ने उन्हें अंग्रेजों का मुँह चिढाना सिखा दिया है, जिनमें दया नहीं, धर्म नहीं, निज भाषा से प्रेम नहीं, चरित्र नहीं, आत्मबल नहीं, ये भी कुछ आदमी नहीं। [८६]

कुछ लोग अंग्रेजी तथा अंग्रेजी राज्य की प्रशंसा करते देखे जाते है। ब्रिटन से भारत आनेवाले अनेक गोरों की कथाएँ है जो भारत को` सोने की चिडिया ` समझकर महज ऐयाशी के लिए आते थे। ` कर्मभूमि ` में सोना बेचती हुई मेमों के बारे में बताया गया है- " यह गोरे उस श्रेणी के थे, जो अपनी आत्मा शराब और जुए के हाथों बेच देते हैं, बे टिकट फर्स्ट क्लास में सफर करते हैं, होटलवालों को धोखा देकर उड जाते हैं और जब कुछ बस नहीं चलता, तो बिगडे हुए शरीफ बनकर भीख मांगते हैं। " [८७]

निष्कर्ष

प्रेमचंद का साहित्य केवल भारत की स्वाधीनता का ही साहित्य नहीं है वरन संसार की समस्त पीडित, दुखी और शोषित जनता का साहित्य है। अन्य पराधीन या अर्ध्द-पराधीन देश उनके साहित्य से प्रेरणा ग्रहण कर सकते हैं, क्योंकि प्रेमचंद ने स्वातंत्र्य-भावना को कभी भी और कहीं भी संकिर्ण रूप में नहीं देखा। जनवादी होने के कारण वे मानव-मात्र के हैं और संत्रस्त मानवता को, निश्चय ही, उनके साहित्य से सदैव आत्मबल मिलेगा। प्रेमचंद ने साहित्य के द्वारा देश और जाति में नयी चेतना उत्पन्न की। स्वाधीनता संग्राम को वाणी दी और जनता के एक बहुत बडे तथा महत्वपूर्ण भाग को स्वतंत्रता के रहस्य से परिचित कराया।

१०] किसान समस्या-

किसानों के प्रति प्रेमचंद ने कोरी बौध्दिक सहानुभूति ही प्रदर्शित नहीं की हैं वरन बडे ही यथार्थ ढंग से उसकी दुर्बलताओं, विशेषताओं और समस्याओं पर प्रकाश डाला हैं। उनके अनेक उपन्यासों में प्रस्तुत समस्याओं का वर्णन मिलता हैं। प्रारंभ से ही वे गांव को दृष्टि में रखकर उपन्यास लिखते रहे। ` गोदान ` तक आते-आते उनकी दृष्टि ग्रामीण जीवन के प्रत्येक पहलू पर अच्छी तरह से प्रकाश डाल देती है। किसानों के जीवन से सम्बन्धित उनके निम्नलिखित उपन्यास विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं- ` वरदान `, ` सेवासदन `, ` प्रेमाश्रम `, ` रंगभूमि `, ` कायाकल्प `, ` कर्मभूमि `, और ` गोदान `।

जीवन के अनेक कष्टों ने ग्रामीण जनता को, किसानों को भाग्यवादी और पूर्व जन्म का विश्वासी बनाया। सालों से उनका शोषण हुआ है। जब-जब किसान ने सर उठाया तब-तब उसे बुरी तरह कुचल दिया गया। किसान वर्ग का असंगठित होना इसके पीछे प्रमुख कारण कहा जा सकता है। युगों से दमन-चक्र में पीस गये किसान डरपोक हो गए हैं। जमींदार पांव तले गर्दन दबी होने के कारण वे अपने अधिकारों तक की माँग करने से डरते हैं। प्रेमचंद ने इस मनोवृत्तिका उल्लेख किया है। किसानों के प्रति प्रेमचंद के मनमें जो प्रेम और सहानुभूति है, वह वास्तविकता को नही दबाती।

` गोदान ` का होरी अनेक स्थलों पर अपनी डरपोक प्रवृत्ति का परिचय देता है- " यह इसी मिलते-जुलते रहने का परसाद है कि अब तक जान बची हुई है। नहीं तो कहीं पता न लगता कि किधर गये। गांव में इतने आदमी तो हैं, किस पर बेदखली नहीं आई ? किसपर कुडकी नहीं आयी ? जब दूसरों के पावों तले अपनी गर्दन दबी हुई है, तो उन पावों को सहलाने में ही कुशलता है। " [८८]

अनेक अभावों और कष्टों के होते हुए भी किसानों का चरित्र उज्ज्वल होता है। वह दगाबाज नहीं होता। प्रेमचंद उसकी खूबियों और स्वार्थी

मनोवृत्ति का मनोवैज्ञानिक चित्रण करते हुए लिखते हैं- "किसान पक्का स्वार्थी होता है, इसमें संदेह नहीं उसकी गांठ से रिश्वत के पैसे बड़ी मुश्किल से निकलते है, भाव-ताव में भी वह चौकस होता है, ब्याज की एक-एक पाई छुडाने के लिए वह महाजन की घंटो चिरोरी करता है। जब तक पक्का विश्वास न हो जाय वह किसी के फुसलाने में नहीं आता।" ८९

किसानों को पूर्वन्मवाद पर विश्वास होता है पूर्वजन्मों में कमाये हुये कर्मो के कारण हमारा जीवन सफल बन सकता है ' गोदान ' का होरी अपने बेटे गोबर को कहता है- " यह बात नहीं है बेटा, छोटे बडे भगवान के घर से बनकर आते है। संपत्ति बडी तपस्या से मिलती है। उन्होंने पूर्वजन्म में जैसे कर्म किये थे, उसका आनंद भोग रहे है। हमने कुछ नहीं संचा, तो भोगे क्या ? " ९०

कृषक की अभिलाषाएं छोटी-छोटी होती हैं, पर वे भी पूरी नहीं होपाती। होरी की अभिलाषा है कि वह एक गाय खरीद ले। ..... "सबरे-सबेरे गऊ के दर्शन हो जाय, तो क्या कहना। न जाने कब यह साध पूरी होगी, कब वह शुभ दिन आयेगा।" ९१

किसान की आर्थिक स्थिति भी उनकी आँखो से ओझल नहीं रही। इसे ' वरदान ' में कमला के नाम बिरजन के पत्रों के शीर्षक अंतर्गत प्रेमचंद लिखते हैं, " टूटे-फटे फूस के झोपडे, मिट्टी की दीवारे, ... किसी के शरीर पर फटा वस्त्र नहीं है। और कैसे भाग्यहीन कि रात-दिन पसीना बहाने पर भी कभी भरपेट रोटियाँ नहीं मिलती।" ९२

भारतीय किसानों की सबसे ज्वलंत समस्या ऋण के बोझ से मुक्त होने की है। अधिकांश किसान महाजनी समस्या के पाट के नीचे बुरी तरह पिस रहे हैं। प्रेमचंद ने बताया कि कर्ज वह मेहमान है जो एक बार आकर जानेका नाम नहीं लेता। ' गोदान ' का होरी बहुत कुछ ऋणभार के कारण ही अजन्म कष्ट उठाता है और अपने जीवन को नष्ट कर लेता है।

होरी अन्य किसानों से ऋण की चर्चा करते हुए प्रेमचंद लिखते है- "फसल में सब कुछ खलिहान पर तौल देने पर भी अभी उस पर कोई तीन सौ का कर्ज था, जिस पर कोई सौ रुपये सूद के बढते जाते थे। मंगरु शाह से आज पांच साल हुए बैल के लिए साठ रुपये लिये थे। उनमें से साठ दे चुका था पर यह साठ रुपयें ज्यों के त्यों बने हुए थे।" [९३]

सीधे-धर्म परायण किसानों का शोषण धर्म की आड में आज भी ज्यों का त्यों बना हुआ है महाजनी सभ्यता पैसे के लिए सब कुछ करने के लिए कटिबध्द है। किसानों की महाजनों ने क्या दशा कर रखी है, उसका स्वरुप शोभा और होरी के वार्तालाप में भली-भाँति देखा जा सकता-

" शोभा निराश होकर बोला-न जाने इन महाजनों से कभी गला छूटेगा कि नहीं।

होरी बोला-इस जनम में तो कोई आशा नहीं है भाई। हम राज नहीं चाहते, भोग-विलास नहीं चाहते, खाली मोटा-झोंटा पहनना और मोटा-झोटा खाना और मरजाद के साथ रहना चाहते है। वह भी नहीं सधता।" [९४]

`गोदान` में अन्य एक स्थान पर प्रेमचंद नें महाजनी सभ्यता पर एक करारा व्यंग्य किया है। होली के अवसर पर यह व्यंग्य करने का अवसर किसानों को मिलता है। किसान महाजन ठाकूर की नकल बनता है। किसान आकर ठाकूर के चरण पकडकर कुछ रुपये माँगता है। ठाकूर उसे दस रुपये देता है लेकिन उसकी आधि रकम काट कर पांच रुपेय भी किसान के हाथ में देता है। किसान के पुछनेपर वह कहता है कि मैंने एक रुपया नजराने का, एक तहरीर का, एक कागद का, एक दस्तूरी का, एक सूद का, रुपया कांट लिया और बचे हुए पांच रुपये आपको दिए। उस पर किसान पांच रुपये उसे वापस देता है और कहता है- " नहीं सरकार। एक रुपया छोटी ठकुराईन का नजरानए है, एक रुपया बडी ठकुराईन का, एक रुपया छोटी ठकुराईन के पान खाने का, एक रुपया बडी ठकुराईन के पान खाने

का। बाकी बचा एक, वह आपके क्रिया-करम के लिए।" [९५]

किसान शांतिप्रिय होते हैं। जहाँ तक हो सके वे झगडों से दूर रहते हैं। `गोदान` का होरी झगडे से बचने के लिए गम खा लेना श्रेयस्कर समझता है। प्रेमचंद लिखते है, "होरी की कृषक प्रवृत्ति झगडे से भागती थी। चार बातें सुनकर गम खा जाना इससे कहीं अच्छा है कि आपस में तनाजा हो। कहीं मारपीट हो जाय, तो थाना पुलिस हो, बंधे-फिरो, सबकी चिरौरी करो। आदालत की धूल फांसो, खेती-बारी जहन्नुम में मिल जाय।" [९६]

`रंगभूमि` में प्रभू सेवक भी इसी प्रकार कहता है- "सूर्य को सिध्द करने के लिए दीपक की जरुरत नहीं होती। देहाती लोग प्राय: बडे शांतिप्रिय होते है। जब तक उन्हें भडकाया न जाय, लडाई-दंगा नहीं करते। आपकी तरह उन्हें ईश्वर-भजन से रोटियाँ नहीं मिलती। सारे दिन सिर खपाते है, तब रोटियाँ नसीब होती है।" [९७]

निष्कर्ष

इस प्रकार प्रेमचंद नें किसान वर्ग की विस्तृत झाँकी अपने उपन्यासों में चित्रित की है। किसान की अनेक समस्याओं का सम्यक उद्‌घाटन करने के बाद वे उनके समाधान भी सुझाते हैं। वास्तव में किसान की समस्या आर्थिक है। जब तक किसान का शोषन बंद नहीं होता तब तक उसकी दशा में कोई सुधार नहीं हो सकता। इसके लिए किसान का शोषण करने वाले वर्ग का नाश होना आवश्यक है।

= संदर्भ सुची =

स. क्र.	लेखक	पुस्तक	पृष्ठ क्र.
१	प्रेमचंद	सेवासदन	१६
२	प्रेमचंद	सेवासदन	४२
३	प्रेमचंद	सेवासदन	६४
४	प्रेमचंद	सेवासदन	६७
५	प्रेमचंद	सेवासदन	१८
६	प्रेमचंद	सेवासदन	१८३
७	प्रेमचंद	सेवासदन	६७
८	प्रेमचंद	सेवासदन	२४२
९	प्रेमचंद	सेवासदन	१९
१०	प्रेमचंद	सेवासदन	३२
११	प्रेमचंद	सेवासदन	११९
१२	प्रेमचंद	सेवासदन	२०
१३	प्रेमचंद	वरदान	२७
१४	प्रेमचंद	वरदान	११५
१५	प्रेमचंद	वरदान	११७
१६	प्रेमचंद	कायाकल्प	५०
१७	प्रेमचंद	प्रतिज्ञा	१६७
१८	प्रेमचंद	रंगभूमि	१५४

स. क्र.	लेखक	पुस्तक	पृष्ठ क्र.
१९	प्रेमचंद	वरदान	३४
२०	प्रेमचंद	निर्मला	४२-४३
२१	प्रेमचंद	सेवासदन	७
२२	प्रेमचंद	निर्मला	१७
२३	प्रेमचंद	निर्मला	३४
२४	प्रेमचंद	प्रतिज्ञा	४६-४७
२५	प्रेमचंद	कर्मभूमि	८
२६	प्रेमचंद	कायाकल्प	१७
२७	प्रेमचंद	कायाकल्प	१७
२८	प्रेमचंद	कायाकल्प	१७
२९	प्रेमचंद	सेवासदन	१-२
३०	प्रेमचंद	सेवासदन	१८
३१	प्रेमचंद	सेवासदन	१८
३२	प्रेमचंद	कर्मभूमि	८
३३	प्रेमचंद	गोदान	१६९
३४	प्रेमचंद	गोदान	२३७
३५	प्रेमचंद	प्रतिज्ञा	४७
३६	प्रेमचंद	गबन	४७
३७	प्रेमचंद	कायाकल्प	२९९
३८	प्रेमचंद	वरदान	२४
३९	प्रेमचंद	गोदान	४८
४०	प्रेमचंद	कर्मभूमि	७५
४१	प्रेमचंद	प्रेमाश्रम	१०
४२	प्रेमचंद	कर्मभूमि	५

स. क्र.	लेखक	पुस्तक	पृष्ठ क्र.
४३	प्रेमचंद	कायाकल्प	१०
४४	प्रेमचंद	कायाकल्प	१०-११
४५	प्रेमचंद	कायाकल्प	१०
४६	प्रेमचंद	कर्मभूमि	७
४७	प्रेमचंद	कर्मभमि	७
४८	प्रेमचंद	प्रेमाश्रम	१९९
४९	प्रेमचंद	प्रेमाश्रम	३८४
५०	प्रेमचंद	कर्मभूमि	८२
५१	प्रेमचंद	कर्मभूमि	८२
५२	प्रेमचंद	कर्मभूमि	८५
५३	प्रेमचंद	कर्मभूमि	८७
५४	प्रेमचंद	कर्मभूमि	११३
५५	प्रेमचंद	कर्मभूमि	११५
५६	प्रेमचंद	कर्मभूमि	९९
५७	प्रेमचंद	कर्मभूमि	११६
५८	प्रेमचंद	कर्मभूमि	११४
५९	प्रेमचंद	कर्मभूमि	१२१
६०	प्रेमचंद	रंगभूमि	२७२
६१	प्रेमचंद	रंगभूमि	२७५
६२	प्रेमचंद	रंगभूमि	३४३
६३	प्रेमचंद	रंगभूमि	३४७
६४	प्रेमचंद	कायाकल्प	१०९
६५	प्रेमचंद	कायाकल्प	११८

स. क्र.	लेखक	पुस्तक	पृष्ठ क्र.
६६	प्रेमचंद	रंगभूमि	३७१
६७	प्रेमचंद	कायाकल्प	१०८
६८	प्रेमचंद	कायाकल्प	२८
६९	प्रेमचंद	कायाकल्प	२९
७०	प्रेमचंद	कायाकल्प	२८
७१	प्रेमचंद	कायाकल्प	३१
७२	प्रेमचंद	सेवासदन	१२६
७३	प्रेमचंद	कायाकल्प	१८२
७४	प्रेमचंद	कायाकल्प	१८२
७५	प्रेमचंद	रंगभूमि	१४
७६	प्रेमचंद	रंगभूमि	१६
७७	प्रेमचंद	रंगभूमि	७९-८०
७८	प्रेमचंद	रंगभूमि	१८१
७९	प्रेमचंद	गोदान	९५
८०	प्रेमचंद	गोदान	३९०
८१	प्रेमचंद	रंगभूमि	२९५

स. क्र.	लेखक	पुस्तक	पृष्ठ क्र.
८२	प्रेमचंद	कर्मभूमि	२३५
८३	प्रेमचंद	कर्मभूमि	२३४
८४	प्रेमचंद	रंगभूमि	८४
८५	प्रेमचंद	सेवासदन	११५
८६	प्रेमचंद	सेवासदन	२८३
८७	प्रेमचंद	कर्मभूमि	५६
८८	प्रेमचंद	गोदान	५
८९	प्रेमचंद	गोदान	८७
९०	प्रेमचंद	गोदान	१७
९१ ९१	प्रेमचंद	गोदान	६
९२	प्रेमचंद	वरदान	६८-६९
९३	प्रेमचंद	गोदान	३१
९४	प्रेमचंद	गोदान	१५७
९५	प्रेमचंद	गोदान	१८७
९६	प्रेमचंद	गोदान	४५
९७	प्रेमचंद	रंगभूमि	२०९